कल्याण जी बदल गए

[ग्रामीण साहित्य माला पुष्प–9]

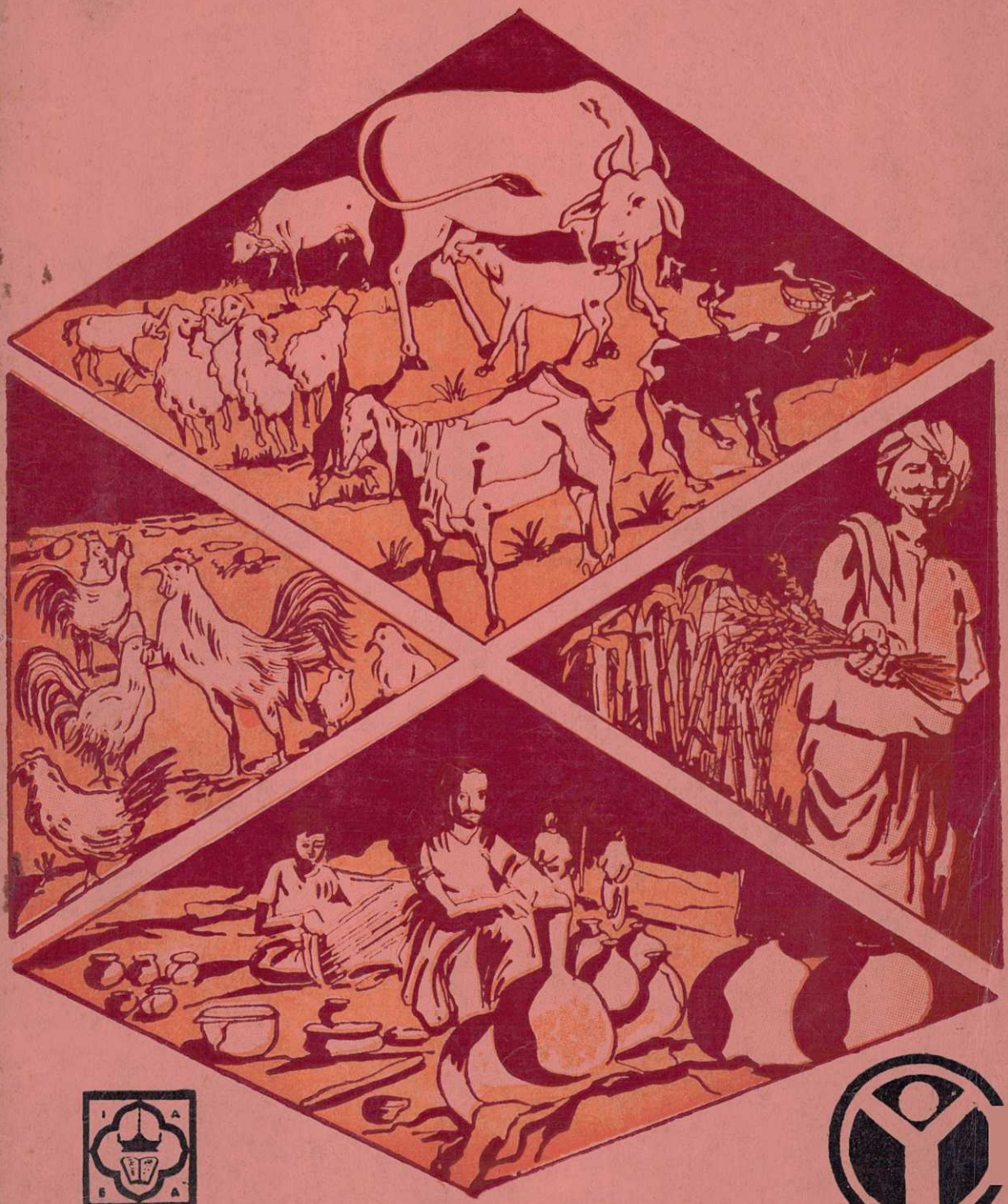

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कल्याणजी बदल गए

लेखक
अ० अ० अनन्त

सम्पादक
डॉ० सुशील 'गौतम'

प्रकाशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रकाशक :

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17 बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली-2

मूल्य : 3 रुपये

**यूनेस्को की आर्थिक सहायता से
प्रकाशित**

रूप सज्जा :
डॉ० सुशील 'गौतम'

पुस्तक शृंखला संख्या : 126

मुद्रक :
युगान्तर प्रेस
मोरी गेट,
दिल्ली-110006.

भूमिका

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ की ओर से ग्रामीण बहिन-भाइयों को ग्रामीण साहित्य माला का नवाँ पुष्प भेंट करते हुए हमें अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। यह साहित्य माला साक्षरता की दिशा में आगे बढ़ने के लिए एक आवश्यक कदम है। वास्तव में, साक्षरता की मूल समस्या, अक्षर-ज्ञान प्राप्त करने के बाद की समस्या है। व्यक्ति लिखने पढ़ने में निरन्तर कुशल बना रहे उसके लिए आवश्यक है कि अक्षर-ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद भी लिखने-पढ़ने का अभ्यास जारी रखा जाए। लिखना-पढ़ना जारी रखने के लिए सरल, मोहक, रोचक तथा उपयोगी पुस्तकों का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसका अर्थ यह भी है कि लेखकों को भी यथेष्ट अवसर प्रदान किए जाएं।

जो लोग प्रौढ़ शिक्षा में रुचि रखते हैं और प्रौढ़ों को पढ़ने-लिखने के लिए बढ़ावा देना चाहते हैं उनके लिए सरल, उपयोगी और रोचक सामग्री उत्पादन करना बहुत आवश्यक है। इस आवश्यकता को अनुभव करते हुए भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ ने ग्रामीण जनता के लिए साहित्य-उत्पादन पर विचार-विमर्श करने के लिए, हिन्दी लेखकों की सहायता लेने तथा उनकी एक गोष्ठी आयोजित करने का निश्चय किया।

यह चर्चा, विचार विमर्श तथा गोष्ठी, 4 अगस्त 1978 से 6 अगस्त 1978 तक, नई दिल्ली में, आयोजित की गई। इसका उद्घाटन हिन्दी के जाने-माने लेखक एवं संसद सदस्य श्री भगवती चरण वर्मा द्वारा किया गया। भारतीय ज्ञानपीठ के सचिव श्री लक्ष्मी चन्द जैन ने इसका निर्देशन किया।

जिन मशहूर लेखकों ने इस चर्चा में भाग लिया, उनमें से कुछ ये हैं :

सर्वश्री जैनेन्द्र कुमार, हरिवंश राय 'बच्चन', प्रभाकर माचवे, रमा प्रसन्न नायक, कमला रत्नम्, राजेन्द्र अवस्थी, मन्नू भण्डारी, राजेन्द्र यादव, इन्दु जैन, बालशौरी रेड्डी इत्यादि। कुछ मशहूर प्रकाशकों ने भी अपना-अपना दृष्टिकोण और अपनी समस्यायें प्रस्तुत करने की चेष्टा की। इन प्रकाशकों में से प्रमुख प्रकाशक थे सर्वश्री दीना नाथ मल्होत्रा, यशपाल जैन, कृष्ण चन्द्र बेरी, रघुवीर शरण बंसल, शीला सन्धु इत्यादि।

हम, इन सभी सहयोगियों के आभारी हैं कि उन्होंने कार्यशाला को महान सफलता प्रदान की। उन चर्चाओं के आधार पर ये दस पुस्तकें भेंट करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। हमें पूरी आशा है कि ग्रामीण जन-समाज इसका खुशी से स्वागत करेगा, क्योंकि ये पुस्तकें उन के जीवन से, उन की समस्याओं से, उन के परिवेश एवं उनकी संस्कृति से जुड़ी हैं।

हम यूनेस्को के अत्यंत आभारी हैं कि उन्होंने यह गोष्ठी आयोजित करने के लिए संघ को आर्थिक सहायता प्रदान की।

इस गोष्ठी में, गोष्ठी के निर्देशक श्री लक्ष्मी चन्द जैन के कुशल निर्देशन एवं सूझ-बूझ तथा प्रौढ़ शिक्षा की सम्पादिका श्रीमती बिमला दत्ता की लगन, मेहनत और भाग-दौड़ ने गोष्ठी को सफल बनाने में बहुत सहायता दी। संघ इनका भी बहुत आभारी है।

आशा है कि पाठकों को यह प्रस्तुत ग्रामीण साहित्य माला पसन्द आएगी।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग,
नई दिल्ली.
2 अक्टूबर 1978

—**शिव चन्द्र दत्ता**
अवैतनिक महासचिव

कल्याण जो बदल गए

1 3 5 0 3 5 1
0 5 3 1 5 1 3
3 1 0 5 0 1 3
0 1 1 3 3 5 3

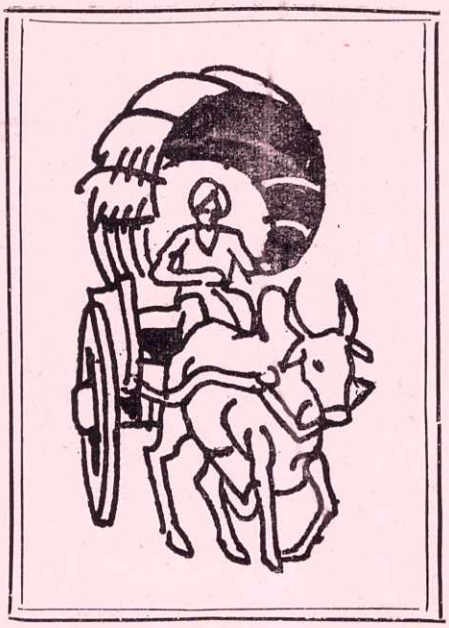

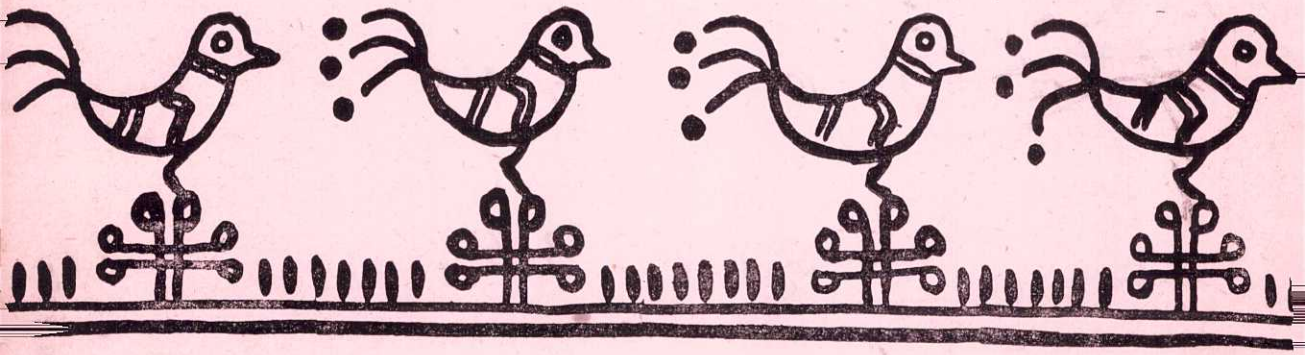

कल्याण जी बदल गए

कल्याणजी इस बात से परेशान हैं कि उनके गाँव के लोग, उनकी बड़ाई करने से कतरा रहे हैं। जगपुरा का बच्चा-बच्चा अभी कल ही तो विशाल मृत्यु-भोज में शामिल हुआ था। कल्याणजी की माताजी का स्वर्गवास हो गया था और एक अरसे से चली आ रही रीति को कल्याण जी भला कैसे छोड़ देते ? उनको इस बात की भी चिन्ता थी कि कहीं उनकी स्वर्गवासी माताजी की मृत्यु पर छोटा मोटा भोज देने पर पास-पड़ौस के लोग ताना न मारें। इसीलिए दिल खोलकर जगपुरा, जगदीशपुरा, कृपालपुरा और सुन्दरनगर के अपने भाई भतीजों और रिश्तेदारों को तो बुलाया ही, अन्य परिचितों को भी निमंत्रण देने में भूल नहीं की। कोई पांच हजार आदमियों की विशाल भीड़ को लड्डू पूड़ी खिलाई गई थी। दस हजार रुपये से ऊपर खर्च हो गए थे। उनकी इच्छा थी कि लोग वाह-वाही करें। उनके भोज की सराहना करें और यह भी कहें कि इस के पहले ऐसा भोज न देखा गया और न ही सुना गया।

जिन लोगों को निमंत्रण दिया गया था, वे अच्छी तरह से जानते थे कि कल्याणजी के इस भोज के पीछे उनकी एक ही इच्छा थी कि उनका माथा ऊंचा हो। वे सीना तान कर अपने आस पास के लोगों को बता सकें कि उनके जैसा रईस दूसरा नहीं है। लेकिन उनके लड़के और भाई उनसे कटे-कटे रह रहे थे। गाँव से भी अभी तक कोई उनके पास तारीफ करने नहीं आया था। परेशानी की खास वजह यही थी। कल्याणजी अब ललुआ नाई की राह देख रहे थे जो सभी तरह की खबरों की जानकारी रखता था और जो उनके

मृत्यु-भोज

मुँह लगा हुआ था। कल्याणजी जैसे ही बरामदे में आकर खड़े हुए वैसे ही ललुआ ने लम्बी जुहार दी। कल्याणजी को सन्तोष हुआ और वे जल्दी ही अपने कमरे में कुर्सी पर जाकर बैठ गए। ललुआ के पहुँचते ही कल्याणजी ने पूछा—"कहो, क्या समाचार लाए हो ?" "मालिक, अब ज़माना कुछ उल्टा गया है। आपने कितना बड़ा भोज किया। मैं तो नहीं जानता कि इस के पहले भी कहीं किसी ने ऐसा भोज दिया था। फिर भी गाँव वाले उल्टा आपकी शिकायत करने लगे हैं। कैसे बुरे लोग हैं।" कल्याणजी की त्यौरियां चढ़ गईं, उन्होंने पूछा—"मेरी क्या शिकायत करते हैं ?" "कहने वालों की ज़ुबान तो कोई पकड़ नहीं लेगा, वे जो भी कहते हैं मेरी तो समझ में नहीं आता।"

"साफ-साफ क्यों नहीं बताते लोग क्या कहते हैं ?" कल्याणजी ने कड़क कर पूछा। "मालिक ! वे कहते हैं कि इस ज़माने में इतने बड़े मृत्यु-भोज करने की कोई जरूरत नहीं थी। गाँव में लड़कों और लड़कियों के स्कूल की इमारत खराब है, पानी भर जाता है। यदि इन रुपयों से स्कूल की इमारत ठीक हो जाती तो सैकड़ों बालक-बालिकाओं को पढ़ने लिखने में कितनी सुविधा होती।" कुछ लोगों ने तो मालिक यह भी कहा...कहते कहते ललुआ चुप हो गया। "क्या कहा," कल्याणजी ताव खाकर बोले।

"लोगों की बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। छोटे मुंह बड़ी बात लोग करते ही हैं। आपको पुलिस ने पकड़ा क्यों नहीं ? यह गांव वालों को खटक रहा है ? एक तो अपना माल खिलाओ, दूसरे ऐसी गन्दी बातें छिः छिः कहते-कहते ललुआ अपने मालिक का मुँह देखने लगा।

"हूँ, मैं देख लूँगा ऐसे बदमाशों को, कौन हैं वे लोग ? क्या नाम है उनका ? बता तो जल्दी से।"

जाने दीजिए मालिक, क्या रखा है इन बातों में। आपके लड़के और भाई भी तो विरोध कर रहे हैं।"

"हाँ, सो तो है। मेरा लड़का विनोद तो इस भोज में ही नहीं था और भाई वह तो नास्तिक है नास्तिक !!

कल्याणजी और ललुआ में यह बातें हो ही रही थी कि विनोद और कल्याणजी के भाई रामशंकर बैठक में आ गए। इन दोनों को देखते ही कल्याण

जी उबल पड़े। पहले उन्होंने अपने लड़के को डांटते हुए कहा—"सुना है अब तुम बहुत उद्दण्ड हो रहे हो। अपने बड़ों की तरफ उंगली उठाने लगे हो ? स्वर्गीय माताजी के मृत्यु-भोज में तुम क्यों नहीं आए ?"

विनोद ने कहा--"अपने बड़ों का आदर करने का यह मतलब तो नहीं है कि उनके गलत कामों को भी ठीक समझा जाए ? आपने दस हज़ार रुपए खर्च कर दिए, क्या इससे स्वर्गीय माता जी का कोई संबंध है ?"

कल्याणजी ने कड़क कर कहा—"तुम कैसे नालायक लड़के हो, क्यों हम अपने रीति-रीवाज़ों को छोड़ दें ? क्या समाज में अपनी हँसी कराएँ और फिर पंडितजी भी कहते थे कि इस भोज से स्वर्गीया माता जी की आत्मा को शान्ति मिलेगी। तुम लोग सोचते हो कि धरम-करम सब छोड़ कर नास्तिक बन जायें।" कल्याणजी का इशारा रामशंकर की तरफ था। रामशंकर ने कहा—"भाई साहब, सभी रीति रीवाज़ों को हमेशा के लिए अपनाए रखना अकलमंदी नहीं है। पंडित जी ने कह दिया और आपने आँख मूंद कर मान लिया। धरम-करम हट्टे-कट्टे लोगों को भोज देने में नहीं है। गरीबों की सहायता में यह धन लगता तो सचमुच धर्म की बात होती ? आपने खेत बेच कर अपना माथा ऊंचा किया, इससे आपकी बड़ाई नहीं होगी !"

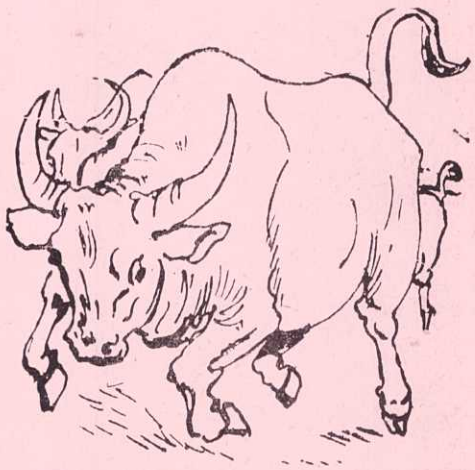

कल्याणजी अपने आपे से बाहर हो गए थे, उनको यह बर्दाश्त नहीं था कि उनके किए हुए कामों में कोई दख़ल दे। खेत बेचने की बात कुछ ही लोगों को मालूम थी। ललुआ नाई के सामने रामशंकर ने जो सच्चाई जाहिर की थी उस से कल्याण जी खिसिया गये। उन्होंने कड़ुआहट भरे शब्दों में कहा..."मैं अपनी जायदाद का मालिक हूँ, तुम कौन होते हो दखल देने वाले ? मुझे तुम से राय लेने की जरूरत नहीं है। हट जाओ मेरे सामने से वरना ठीक नहीं होगा।"

"पिताजी आप अन्याय कर रहे हैं, झूठी शान के लिए खर्च करना

और ऊपर से हम लोगों की बेइज्जती करना यह आपको शोभा नहीं देता।

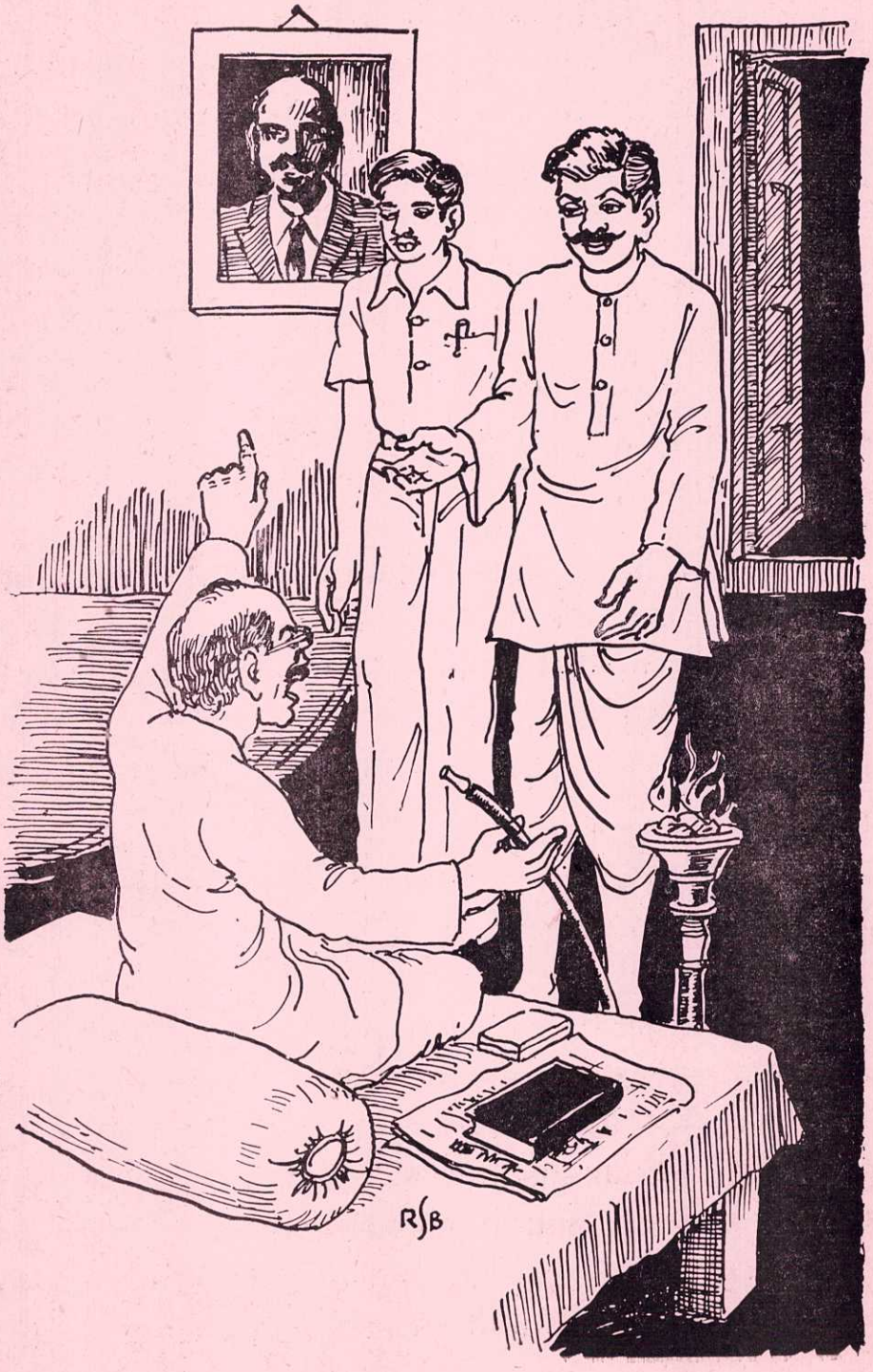

स्वार्थी पुरोहितों के चक्कर में पड़ कर आपने यह भी न सोचा कि अभी हमारे भाई और बहिनों की पढ़ाई लिखाई तथा शादी ब्याह होना बाकी है। जो रुपये आपने भोज और दान-दक्षिणा में खर्च किये हैं उससे तो कहीं अच्छा था कि किसी स्कूल या अस्पताल को दे दिए होते।" विनोद के विरोध का ढंग बदल गया था।

रामशंकर भी ताव खा गए थे, बड़ी बैचेनी के साथ बोले—"भाई साहब, आपका यह सोचना गलत है कि आप अकेले ही बाप-दादों की जायदाद के मालिक हैं। हम लोगों का भी उसमें हिस्सा है और उसे आप मन-मानी ढंग से खर्च नहीं कर सकते ? इस खर्च को करने के पहले कम से कम परिवार के दूसरे सदस्यों से भी तो पूछा होता, आखिर मेरी भी तो माँ थी। आप अपनी सनक में आकर कुछ भी करते रहें और हम लोग चुपचाप सिर हिलाते रहें।

कल्याणजी चीख कर बोले—"ले लो अपना हिस्सा, और हट जाओ मेरे सामने से। वरना अनर्थ हो जाएगा। मैं तुम सब की एक एक की हड्डी पसली एक कर दूँगा। तुम्हारी अधार्मिक बातें मेरी बर्दाश्त के बाहर हैं। तुम लोगों ने आखिर समझ क्या रखा है ? कल्याणजी अभी इतना ही कह पाए थे कि शोर शराबा सुन कर आस पास के लोग इकट्ठे हो गए। उनमें मास्टर सुखानन्द भी थे।

सुखानन्द अकेले वह व्यक्ति थे जिनका असर कल्याणजी पर था। यदि कल्याणजी किसी की बात मानते थे तो वह सुखानन्द ही था। सुखानन्द को देखते ही कल्याणजी का क्रोध शान्त हो गया और उन्हें उचित आसन देकर कल्याणजी भी पास ही में बैठ गए।

मास्टर सुखानन्द ने विनोद और रामशंकर को इशारे से चुप रहने और चले जाने को कहा और कल्याणजी की तरफ देखते हुए बोले—"आप मृत्यु-भोज और कुपात्रों को दान-दक्षिणा देने की बराबर हिमायत कर रहे हैं और जो आप के विचारों का समर्थन नहीं करें वे नास्तिक हैं ?" बीच ही में कल्याणजी ने टोकते हुए कहा—"मास्टरजी अभी तक तो विद्वानों और पंडितों ने यही बताया है कि भोज और दान-दक्षिणा का फल मृतक की आत्मा

को मिलता है। फिर तो कोई वजह नहीं कि मैं भोज और दान-दक्षिणा न करता।"

मास्टरजी मुस्कराते हुए बोले—"आपने उस जाट की कहानी सुनी है जिसका बाप मर गया था और स्वार्थी लोगों ने उसके साथ क्या किया ?"

कल्याणजी ने कहा—"मास्टरजी मैंने जाट की कहानी नहीं सुनी आप ही बतायें।"

पंडितजी ने कहना प्रारंभ किया—"एक जाट था। उसके घर में एक गाय बहुत अच्छी और अधिक दूध देने वाली थी। आस-पास उस गाय की बड़ी चर्चा थी। जाट के पुरोहित की नजर भी उसी गाय पर थी, वह मनाया करता था कि कब जाट का बाप मरे और यह दुधारु गाय वह हड़प ले। कुछ दिनों के बाद जाट के बाप का मरने का समय आ गया। जीभ बन्द हो गई और उसे खाट से जमीन पर लिटा दिया गया। उस समय जाट के नाते रिश्तेदार और मिलने वाले सभी इकट्ठे थे। तब पुरोहित ने जाट को पुकारते हुए कहा—"यजमान अब गोदान करें।" जाट ने दस रुपये अपने पिताजी के हाथ में रखते हुए पुरोहित जी को संकल्प पढ़ने के लिए कहा। पुरोहितजी ने कहा—"वाह, वाह, क्या तुम्हारे पिताजी बार-बार मरेंगे। इस समय तो सच-मुच की गाय ले आओ, जो सच-मुच दूध देती हो।"

जाट ने कहा—"हमारे पास तो एक ही गाय है, उसके बिना तो हमारे बाल-बच्चों का निर्वाह नहीं हो सकेगा, इसलिए उस गाय को संकल्प नहीं कराऊंगा। यह बीस रुपये लो और संकल्प पढ़ो। इन्हीं रुपयों से दूसरी दूधारु गाय ले लेना।

पुरोहित ने कहा—"क्या तुम्हारे पिताजी से गाय तुम्हें अधिक प्यारी है ? तुम कैसे बेटे हो जो अपने पिताजी को वैतरणी नदी पार करने के लिए गाय भी नहीं दे सकते।"

उस समय नाते रिश्तेदार सभी थे। पुरोहित की बातें सुनकर लोगों ने जाट को मजबूर किया कि अपने पिताजी को वैतरणी पार कराने के लिए पुरोहित जी को वह गाय दान दे दे।

जाट ने गाय पुरोहित को दे दी। दस-बारह दिन तक उस जाट के लड़के बिना दूध के रहे। उधर पुरोहितजी प्रतिदिन एक बाल्टी दूध निकालकर खुद पीते और बाकी अपने परिवार वालों को देते। चौदह दिन बाद वह जाट पुरोहित जी के घर जा धमका। उसने देखा कि पुरोहित ने दूध अभी अभी दुहा है।

जाट ने कहा—"पुरोहित जी बाहर आओ।"

पुरोहित कुछ घबड़ा सा गया। जाट ने कहा—"तुम तो बहुत झूठे हो।"

"मैंने क्या झूठ बोला है ?" पुरोहित जी ने इधर-उधर ताकते हुए कहा।

"गाय आपने किसलिए ली थी ?"

"तुम्हारे पिताजी को वैतरणी नदी पार कराने के लिए।"

जाट ने कहा –"फिर तो गाय को वैतरणी नदी के किनारे, आपको पहुँचाना चाहिए था। मेरा बाप नदी में कितने ही गोते लगाता होगा।"

पुरोहितजी ने कहा—"नहीं, यह बात नहीं है। दान के पुण्य से इसी प्रकार की एक दूसरी गाय स्वर्ग में तुम्हारे पिताजी को मिल गई होगी, वह उसी के द्वारा वैतरणी पार कर गए होंगे।"

जाट ने फिर पूछा—"वैतरणी नदी यहाँ से कितनी दूर होगी।"

पुरोहित ने उत्तर दिया—"अनुमान से कोई तीस करोड़ कोस होगी।"

जाट ने कहा—"इतनी दूर से यदि मेरे पिताजी के पास से कोई समाचार या चिट्ठी या तार आया हो कि उन्हें आपको दान में दी गई गाय के बदले दूसरी गाय मिल गई है, तो दिखलाओ।"

पुरोहितजी सकपका गए। उन्होंने कहा—"पुराणों में ऐसा ही वर्णन आया है इसलिए हम लोग यही मानकर चलते हैं।"

जाट ने सख्ती के साथ कहा—"यह तो सब स्वार्थी लोगों का प्रपंच है।" उसी क्षण जाट अपनी गाय और बछड़े को खूँटे से खोल कर उनको साथ लेकर अपने घर की ओर चला गया।

"अधर्म हो गया, अधर्म हो गया। दान दी हुई वस्तु को यह जाट वापस लिए जाता है। अरे! तुम्हारा सत्यानाश हो जाय।" पुरोहित जी चिल्लाने लगे।

जाट और पुरोहित जी का किस्सा सुना कर मास्टरजी ने कल्याणजी को आगे बताया कि मरने वालों का इन रीति-रिवाजों से कोई भी संबंध नहीं है। अगर आपको अपनी स्वर्गीय माताजी की इतनी ही चिन्ता थी तो उनके नाम से कोई ऐसा काम करते, जिससे हमेशा के लिए उनका नाम अमर हो जाता। मृत्यु-भोज का धर्म से दूर का भी संबंध नहीं है। आपने अपने परिवार वालों की राय से भी यह काम नहीं किया, इसलिये वे सभी आपसे नाराज हैं। आप तो परिवार के मुखिया हैं सब की राय ले लेते तो आपको अधिक बल मिलता। गांव के लोगों की भी आपसे कोई सहानुभूति इस सम्बन्ध में नहीं है, क्योंकि उनकी नजरों में आपने यह काम दिखावे के लिए किया है। अब आप ठण्डे दिल से सोचें कि आपका पुत्र और भाई कहाँ तक गल्ती पर हैं उनको डांटना डपटना आपके लिए किस तरह उचित था?

कल्याणजी थोड़ी देर तक चुप रहे। उनके सामने अनेक पुरानी-नई बातें आती जा रहीं थीं। उनका अहंकार यह स्वीकार करने को तैयार ही नहीं था कि उन्होंने कोई गलत काम किया है। कई साल पहले ठाकुर रंगनाथसिंह ने भी मृत्यु-भोज किया था। दान दक्षिणा दी थी। अभी पार साल चुन्नीलाल ने भी बहुत बड़ा भोज दिया था। यदि मैं इन लोगों के मुकाबले

में पीछे रह जाता तो लोग मेरी हंसी उड़ाते। लेकिन आज यही लोग मेरे खिलाफ हो रहे हैं। इन्हीं बातों की उधेड़ बुन में कल्याणजी लगे थे। उनका ध्यान उस वक्त टूटा जब मास्टरजी ने कहा—"अब आप क्या सोच रहे हैं?"

कल्याणजी ने सकपका कर कहा—"कुछ नहीं। आपकी बातें ठीक ही लगती हैं। किन्तु एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही है कि मृत्यु-भोज देने वाला मैं कोई पहला आदमी तो नहीं हूँ इसके पहले भी अनेक व्यक्ति इसी प्रकार का भोज दे चुके हैं। फिर मैंने ही कौन सी गलती कर डाली है?"

मास्टरजी ने कहा—"पुराने समय की बातों पर आज विचार करना अच्छा नही लगता। पहले लोग क्या करते थे क्या नहीं करते थे इसको आप छोड़ दें। आज आप इस कस्बे के प्रधान हैं। कई पंचायतों के सरपंच हैं इसलिए आपके किये हुए कामों के बारे में लोगों की दिलचस्पी होना साधारण सी बात है। गाँव का सरपंच अपने उदाहरण से लोगों के अन्दर गलत परम्पराओं की बुनियाद न डाले, तभी उसकी बड़ाई हो सकती है। वह लोगों के अन्दर अच्छाइयों को पैदा करें, तभी उसका लोग अनुकरण करेंगे, उसकी तारीफ करेंगे। वरना यही कहेंगे कि 'लकीर का फकीर है।" दुनिया कितनी तेजी से बदल रही है इस बदलाहट में हमारे कदम भी बढ़ते हैं वरना हम पीछे रह जायेंगे।"

मास्टरजी कुछ बातें बिल्कुल निजी होती हैं और वे निजी ही रहती हैं जैसे मैं क्या खाना खाता हूँ, कैसे कपड़े पहनता हूँ किन चीजों का शौक है मुझे? इनसे किसी का क्या लेना देना? मेरे पास जमीन है, जरूरत से ज्यादा है। मैं उसे बेच देता हूँ और अपनी इच्छा की पूर्ति करता हूँ। भला इसमें किसी को क्या एतराज हो सकता है। परिवार वालों को किसी तरह की तकलीफ नहीं है फिर वे क्यों नाक भौं चढ़ायें। मैं झुक कर रहना कभी भी पसंद नहीं करता। कोई भी मुझे कुछ भी कहे इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। मैं अपनामालिक स्वयं हूँ।"

कल्याणजी आपने लोगों से कुछ वायदा किया है, लोगों की निगाहें किसी और की अपेक्षा आपके ऊपर अधिक टिकती हैं। सच बात तो यह है कि आपका कोई भी कार्य केवल आपका ही नहीं हैं वह दूसरों को भी प्रभावित करेगा। यदि आप आज शराब पीना शुरू कर दें, संभव है इसे आप अपनी निजी

बात बतायें तो निश्चय समझिए कि आपका यह कार्य लोगों में चर्चा का विषय बन जाएगा। इस प्रकार कहाँ रही आपकी व्यक्तिगत बात। कई बार आपको सचेत किया कि अहंकार के साथ न बोलें किन्तु अब ऐसा लगता है कि यह रोग आपको बुरी तरह चिपक गया है। अच्छा से अच्छा आदमी जब अहंकार की चपेट में आ जाता है तब वह कौड़ियों का हो जाता है। जब आप अपनी बातों को ऊंचा रखने के लिए मैं-मैं करते है और स्वयं अपना मालिक होने का दम्भ दिखाते हैं तो आप ईश्वर को भूल जाते हैं। उसकी सीमा का आप उल्लंघन करते हैं ऐसी स्थिति में आप स्वयं सोचें कि नास्तिक कौन है ? वह जो ईश्वर को भूला हुआ है या वह जो ईश्वर के बन्दों की सहायता के लिए आपसे कहते हैं ? आपके घर के और घर के बाहर के लोग यही कहते हैं न कि स्कूल के भवन बनाते तो सैंकड़ों लड़के-लड़कियों को सुविधा मिलती। भूखे-नंगों को खिलाते तो उनकी आत्मा शान्त होती। वे दुआयें देते। जिनके पास जमीन नहीं है यदि उनके गुजर बसर के लिए अपनी फ़ालतू जमीन दे देते तो कई परिवार परवरिश पाते। आपके अन्दर जब तक अहंकार का प्रवेश है, तब तक आप किसी से प्रेम नहीं कर सकते।"

इतना कहने के पश्चात् मास्टरजी अपने घर चले गए। किसी काम के लिए उनका बुलावा आया था। कल्याणजी अकेले बैठे सोचते रहे।

कल्याणजी को इतना तो पता चल ही गया था कि कहीं न कहीं उनसे भूल हुई है। किन्तु अहंकारी स्वभाव उनके रास्ते में बार-बार आकर भूल स्वीकार करने में बाधा डाल रहा था। वह सरपंच हैं और सरपंच के नाते उनकी कुछ जिम्मेदारियाँ हैं, इसे भी वह जानते थे। लेकिन अपने आपको सही साबित करने

के लिए वह कुछ भी करने को तैयार नहीं थे। वही पुराना रवैया, अकड़ और अप्रिय। मास्टरजी कल्याणजी के बचपन के साथी थे। समझदार व अनुभवी व्यक्ति थे। सरल हृदय और सुलझे हुए थे। कल्याणजी, केवल मास्टरजी की बात सुनते और कभी-कभी उनकी सलाह से काम करते थे किन्तु अहंकारी स्वभाव होने के कारण यदि कोई मान सम्मान से संबंधित घटना होती, तो वे चट्टान की तरह अड़ जाते थे। अपने जिद्दी स्वभाव के कारण न तो वे किसी से प्यार करते थे और न कोई उन्हें प्यार करता था। एक तरह से वे अकेले थे। भय और आंतक के वातावरण में ही लोग उनके पास पहुँचते थे तथा सही बात न कहकर कल्याणजी को पसंद आने वाली बातें ही वे अक्सर उन्हें बताया करते थे। आवश्यकता से अधिक जमीन के मालिक होने के कारण बहुत से लोगों की रोजी-रोटी भी उन्हीं से जुड़ी हुई थी। आज तक कल्याण जो किसी के पास कुछ कहने नहीं गये। पूरा गाँव किसी न किसी रूप से उन्हीं से जुड़ा हुआ था। इसलिए चुनाव आदि के समय पर केवल वे आदेश देते थे। उनके खिलाफ किसी अन्य की उम्मीदवारी अभी तक देखने में नहीं आई। पंचायत हमेशा उनकी मर्जी के मुताबिक बनती थी। इसीलिए कोई ऐसा काम नहीं हो पाता था, जिससे लोगों को लाभ पहुँचता। बात ऐसी नहीं थी कि लोग इस सच्चाई को न जानते हों, जानते सभी थे आपस में खुसुर-पुसुर भी होती थी। विरोध की आग अन्दर ही अन्दर सुलग रही थी। किन्तु सामने खुलकर विरोध करने की हिम्मत किसी में नहीं थी सिवाय मास्टर सुखानन्द के।

मास्टर सुखानन्द चाहते थे कि उनके गाँव को भी प्रगति का लाभ मिले। लोगों को जीवन-यापन की ऐसी सुविधाएँ पहुँचाई जाएँ कि दरिद्रता

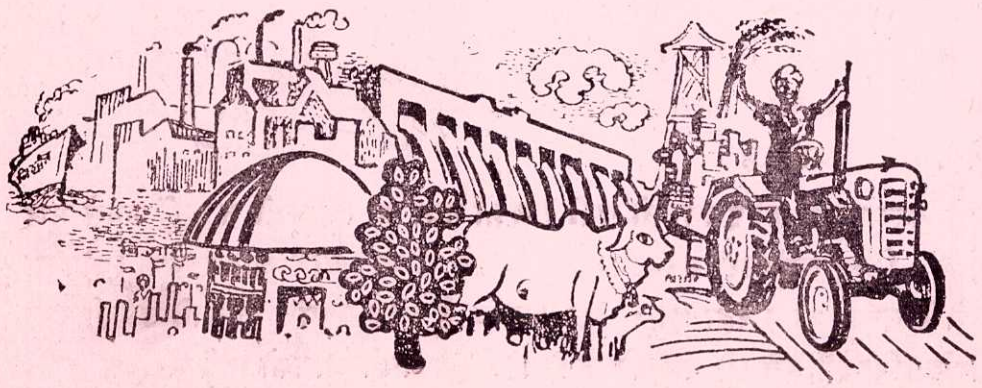

और अभाव के लोगों को छुटकारा मिले। किन्तु मुश्किल यही थी कि गाँव में मिलजुल कर काम करने की कमी थी। जब तक संगठित हो कर कोशिश न की जाए तब तक गाँव का विकास सम्भव नहीं है। लोगों में पाखण्ड और गलत रीति-रिवाज इस कदर समा गए हैं कि धर्म की सच्चाई छिप गई है। मास्टर सुखानन्द एक अरसे से इसी चिन्ता में थे कि कैसे गाँव की उन्नति हो, कैसे लोगों में प्रेम और एकता बढ़े? इन्हीं बातों को सोचते-सोचते उन्हें घण्टों बीत जाते थे। लेकिन कोई रास्ता नजर नहीं आता था। अचानक कल्याणजी द्वारा दिए गए मृत्यु-भोज से जो वातावरण पैदा हुआ उससे एक बात का निश्चय मास्टरजी ने कर लिया कि सबसे पहले जो ऊँचे लोग हैं, बड़े हैं और जो अगुआ बनते हैं, उन्हें ठीक होना पड़ेगा।

मास्टर सुखानन्द सुबह सवेरे कल्याणजी की हवेली में जा पहुँचे। कई दिनों से कल्याणजी की भी इच्छा खुल कर मास्टरजी से बात करने की थी। अतः मन ही मन वह प्रसन्न हुए, उन्हें बैठाया तथा उनसे चाय पीने का आग्रह किया। मास्टरजी ने इधर-उधर की चर्चा के बाद उनके परिवार के सम्बन्ध में पूछा तो कल्याणजी ने बताया कि वह पूरे परिवार में अब अकेले रह गए हैं न तो कोई उनसे बात करता है और न पास ही आता है। यहाँ तक कि लोग सामने आने से कतराने लगे हैं। केवल नौकरों के द्वारा बातचीत परिवार के सदस्यों में पहुँचाई जाती है।

मास्टरजी ने पूछा—"आखिर इसकी वजह क्या है क्या कभी आपने सोचा कि आपके परिवार के लोग आपके अपने घनिष्ठ होकर भी दूर क्यों हैं? परिवार के बाहर के लोगों की बात तो जाने दीजिए?"

कल्याणजी ने कहा—"मेरा कोई भी काम मेरे परिवार के लोगों को पसन्द नहीं आता, यही कारण है कि वे मुझसे दूर-दूर रहते हैं।"

मास्टरजी ने समझाते हुए कहा—"बात ऐसी नहीं है। आप परिवार के मुखिया हैं। जो दूसरे लोग हैं आखिर उनकी भी अपनी राय होगी, इच्छाएँ और आवश्यकतायें होंगी। यदि आप हर काम अपनी मर्जी से, बिना किसी की राय जाने, करेंगे तो आप पर मनमानी करने का दोष तो आ ही जाएगा। माना कि आप बड़े हैं फिर भी छोटों की राय तो लेनी ही चाहिए, ताकि

उन्हें भी इस बात की जानकारी रहे कि आप कोई काम बिना उनकी सलाह-मशविरा के नहीं करते, भले ही आपको उनकी सलाह पसन्द न आए। बाद में जो आपको अच्छा लगे वही करें। इससे आपके तथा परिवार के बीच की दूरी कम होगी, लोग खुल कर आपसे बातें करेंगे। तभी आप वास्तव में अपने परिवार के मुखिया हो सकते हैं।"

कल्याणजी ने कहा—"यह कैसे हो सकता है कि छोटी सी बात के लिए मैं एक-एक सदस्य से पूछता रहूँ। मैं उनका दुश्मन तो नहीं हूँ। उनकी भलाई के लिए ही तो सोचता रहता हूँ।"

"बात छोटी हो या बड़ी उसका महत्व कम नहीं होता। उदाहरण के लिए, यदि आपको परिवार के लोगों के लिए कपड़ा खरीदना है तो आप सब की राय जान लेंगे तो इससे आपको सही निर्णय लेने में मदद मिलेगी, वैसे अगर आपने अपनी पसन्द का कपड़ा खरीद लिया, तो इससे आपके दिल में यही रहेगा कि आप परिवार की सेवा कर रहे हैं, किन्तु हो सकता है

आपकी पसन्द दूसरों को न भाए, और वे आपके दबाव में आकर अपना विरोध भी न जाहिर कर सकें, तो यह कोई अच्छी परम्परा नहीं होगी। जो हालत आपके परिवार की है वही पूरे समाज की है। आपको हमारे गाँव के समाज ने अपना सरपंच बनाया है, बहुत बड़ी जिम्मेदारी इस समाज के सुख-

सुविधा की आप पर है। यदि आपने अपने परिवार वाला तरीका यहाँ भी अपनाया भले ही किसी कारणवश लोग आपके विरोध में कुछ न कहें, किन्तु मन ही मन वे आपसे नाराज जरूर हो जायेंगे।" मास्टरजी ने बड़े शान्त स्वरों से कहा।

कल्याणजी ने कहा—"मास्टरजी सभी अपने कर्मों का फल भोगते हैं, गाँव वाले जैसा करेंगे वैसा भरेंगे। मैंने गाँव वालों के साथ कोई बुराई तो नहीं की। फिर मुझसे लोग क्यों दुखी हैं?"

मास्टरजी ने कहा—"आपने कोई बुराई गाँव वालों के साथ नहीं की, यह बात सही हो सकती है लेकिन आपने उनके लिए कोई अच्छा काम भी तो नहीं किया। गाँव की आधी से अधिक जमीन आपके पास है, जो खेतिहर मजदूर आपके यहाँ काम करते हैं उनके तन पर कपड़े नहीं हैं, उनकी झोंपड़ी में शायद पूरे बर्तन भी नहीं होंगे। आपने कभी इन दरिद्रों की फौज की तरफ भी निगाह उठा कर देखा है। वे बेचारे कौन सा खोटा कर्म कर रहे हैं, रात-दिन मेहनत करते हैं फिर भी नंगे और भूखे हैं? क्या आपका उनके लिए कोई फर्ज नहीं है?"

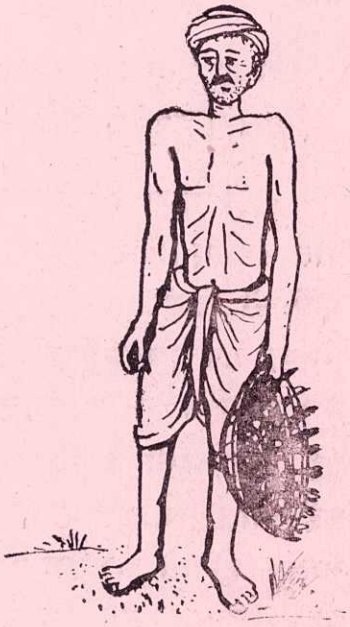

कल्याणजी ने कहा—"जो मजदूर मेरे यहाँ काम करते हैं उनको मजदूरी मिलती है। कोई यह नहीं कह सकता कि मैंने किसी की मजदूरी रोकी हो, अब रहा उनके नंगे-भूखे रहने का सवाल तो मैं क्या कर सकता हूँ? सरकार को चाहिए वह उनको जमीन दे, मकान दे।"

मास्टरजी ने कुछ ऊँचे स्वरों से कहा—"कल्याणजी अभी तो आप धार्मिक होने की बात कह रहे थे, आप को पता है सच्चे अर्थों में धार्मिक व्यक्ति कौन है?"

कल्याणजी मास्टरजी की तरफ ताकते हुए खामोश रहे जैसे वे पूछना

चाहते हों कि धार्मिक कौन है ?

मास्टरजी ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा--"कल्याणजी,

"दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान,
तुलसी दया न छोड़िए, जब लग घट में प्राण।"

आप अपने सामने भूखों और नंगों को देखते रहें, दुखियों और रोगियों की चीख-चिल्लाहट सुनते रहें फिर भी दया के वशीभूत होकर उनकी आप सहायता न करें और उन्हें उनके कर्मों के फल को भोगने लिए छोड़ दें, तो क्या यह आपकी धार्मिकता होगी ? आखिर आपका भी तो कोई कर्त्तव्य है ? आप अभी केवल अपने लिए जी रहे हैं। जिस दिन आप गाँव वालों के लिए भी जिएंगे, उनके कष्टों का अनुभव करेंगे उसी दिन आपका जीवन सार्थक होगा। अपने लिए जीना कोई जीना नहीं है जैसा कि कहा गया है—

"आपु आपु कहें सब भलो, अपने कहे कहें कोई,
तुलसी कहें जो सब भलो, सुजन सराइश सोई।"

कल्याणजी को ऐसा लगा जैसे यहाँ भी वे मात खा गए हैं। उनका जीवन तो सचमुच अभी तक अपने ही लिए था। छोटी-छोटी बातों के लिए भी वह अपना स्वार्थ छोड़ने को तैयार नहीं होते थे। रामहित की घटना उनकी आँखों के सामने आ गई, कैसे अपनी जमीन से उसे बेदखल किया था। कई वर्षों से जमीन जोत रहा था वह, लालच में आकर ही तो रामहित की जगह सुमेर को दे दी थी। सचमुच उस समय रामहित और उसका परिवार गिड़गिड़ा कर रो रहा था। उनका रोना और बिलखना कल्याणजी के सामने आ गया। इसी तरह की एक-एक करके कई घटनाएँ कल्याणजी की आँखों के सामने सिनेमा की भाँति आने लगीं।

कल्याणजी जैसे सोते से जाग गए हों। उनकी निद्रा टूट गई हो। मास्टरजी के शब्द-बाणों ने उनके दिल को भेद दिया था। उन्होंने मर्माहत होकर कहा—"मास्टरजी जिस धर्म की बात आपने कही है अगर वही धर्म है तब तो मैंने सचमुच धर्म के विपरीत ही कार्य किया है, अब मुझे पता चला कि अपने अभिमान के कारण ही मैं आज सबसे अकेला हूँ। यह अभिमान कैसे निकले ? इसका उपाय बताएँ।"

मास्टरजी ने कहा—"अभिमान हर जगह अपना सिक्का जमाता है, धन में, रूप में, पद में, विद्वता और ज्ञान में, सभी जगह उसकी पैठ आसानी से हो सकती है। यदि आप सचमुच अभिमान को निकालना ही चाहते हैं तो अपने हृदय में प्रेम सोते पैदा कीजिए, अहंकार प्रेम से पिघलता है, गलता है और मिट जाता है। क्योंकि प्रेम दूसरे के लिए त्याग और कष्ट का पाठ पढ़ाता है। जो व्यक्ति दूसरों के दुःख-दर्द में शरीक होगा, दूसरों के लिए अपने सुख को छोड़ देगा, निश्चय ही अभिमान वहाँ से रफू-चक्कर हो जाएगा। यदि आप अपने आप को सरल, और दयावान बनाएँ तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।"

कल्याणजी ने कहा—"भला यह कौन सी कठिन बात है, इसे तो मैं आसानी से कर लूँगा। आप यही चाहते हैं न कि मैं सब से प्रेमपूर्वक मिलूँ, उनके दुःख-दर्द पूछूँ और उनमें अपना सहयोग दूँ। अब मैं ऐसा ही करूँगा इसे आप निश्चित समझिए।"

मास्टरजी ने हँसते हुए कहा—"यह भी आपके अभिमान का ही नमूना है। इतनी सरलता से आप एक ही क्षण में प्रेमी बन गए और आप सरल हृदय और दयावान भी हो गए, तब तो आपने कमाल ही कर दिया। सुनी है एक कहानी किसी क्रोधी व्यक्ति की। एक आदमी था। वह इतना क्रोधी था कि उसने अपनी स्त्री और बाल-बच्चों को पीट-पीट कर भगा दिया और अपनी ही झोंपड़ी में आग लगा दी। एक दिन उसके गाँव में एक सन्त पधारे। बड़ा नाम था सन्त का, उन के साथ उनके शिष्यों की पूरी पलटन थी। गाँव के उस क्रोधी को भी सन्त के पास ले गए और उसका पूरा वृत्तान्त कह सुनाया, उसके क्रोध की विनाश लीला भी बताई, तथा सन्त से उसे समझाने के लिए विनती की। इस पर सन्त ने उस क्रोधी से कहा—"बच्चे, छोड़ सब मोह

माया, चल मेरे साथ।" क्रोधी ने कहा—"लो छोड़ दिया सब कुछ, और हो गया तुम्हारे साथ।" आनन-फानन उसने अपने कपड़े-लत्ते उतार फेंके और गेरुआ वस्त्र धारण कर लिए। अब उसकी यह हालत थी कि यदि सन्त और उसके साथी बैठे हैं तो वह खड़ा है यदि वे सब सो रहे हैं तो जाग रहा है। कभी-कभी एक पैर से वह घण्टों खड़ा होकर राम-राम का जाप किया करता था। थोड़े ही दिनों में अपनी भीषण तपस्या से वह अपने सभी साथियों से आगे हो गया। उसके तप और त्याग की तरह-तरह की कहानियाँ प्रचलित हो गईं। सभी लोग इस महान् त्यागी के आगे नतमस्तक होने लगे। सन्त की मृत्यु के पश्चात् वही व्यक्ति उनका प्रधान बना। फिर क्या था एक शहर से दूसरे शहर में उसका आना-जाना शुरू हो गया। भीड़ आगे-पीछे चलने लगी। जैसे किसी सिद्ध पुरुष के साथ चलती है। एक दिन किसी शहर में उनका आगमन हुआ, बड़ा शानदार पण्डाल बनाया गया, दरवाजे और तोरण-द्वार बने, बड़ी भव्य तैयारियाँ थीं। जब सन्त जी अपने साथियों सहित पधारे तो तालियों की गड़गड़ाहट से सारा सभास्थल गूँज उठा। सभी की निगाहें सन्त पर टिकी हुई थीं, अचानक उस सभा से एक आदमी उठा और धीरे-धीरे पण्डाल के पास जाकर सन्त जी के पास खड़ा हो गया। वह आदमी भी सन्त के ही गाँव का था और उसके बारे में सब कुछ जानता था। सन्त ने भी उस आदमी को पहचाना, किन्तु नजरें फेर लीं। उस आदमी ने इधर-उधर की बातें करने के बाद सन्त जी से पूछा—"महाराज, आपका नाम क्या है?" सन्त की त्योरियाँ चढ़ गईं। उन्होंने कठोर मुद्रा में कहा—"शान्ति नाथ।" फिर वह व्यक्ति सन्त से ईश्वर, परमात्मा-आत्मा की बातें करने लगा और चन्द क्षणों के बाद उसने फिर पूछा—"महाराज, आपका नाम क्या है?" इस बार सन्त जी ने कड़क कर कहा—"तुम बहरे हो गये हो क्या?" बार-बार मेरा नाम पूछते हो, अखबार नहीं पढ़ते, रेडियो नहीं सुनते? मेरे प्रोग्राम की खबरें क्या तुम नहीं सुन या जान पाये हो? मेरा नाम शान्तिनाथ है। वह व्यक्ति फिर आत्मा-परमात्मा की चर्चा में लग गया और चन्द मिनटों के बाद ही उसने फिर पूछा—"महाराजजी, आपका नाम क्या है?" इतना सुनना था कि सन्तजी ने उठाया डंडा और मार दिया उस आदमी के सिर पर, और कहा कि मेरा नाम शान्तिनाथ है। उस व्यक्ति ने कहा—"अब समझा

महाराज। आदमी यदि बाहरी चोला बदल ले तो जरूरी नहीं कि उसके अन्दर भी बदलाव आ जाए। अन्दर वही क्रोधी बैठा है और बाहर सन्त का स्वरूप दिखा रहा है।"

इस कहानी को सुनने के पश्चात् कल्याणजी को सचमुच कुछ सोचने का अवसर मिला और उन्होंने कहा—"मास्टरजी मैं पूरी कोशिश करूँगा कि मेरे अन्दर और बाहर एक सा ही परिवर्तन हो। आखिर उस से मुझे भी प्रसन्नता होगी। अधिक से अधिक लोग मेरे नजदीक आयेंगे और मुझ पर विश्वास करेंगे। लेकिन यह बताइए कि गाँव के लिए मेरी उपयोगिता कैसे हो सकती है ? मैं कौन सा ऐसा कार्य करूँ जिससे लोगों को लाभ पहुँचे और मेरे बारे में जो विचार ग्रामवासियों के मन में हैं, वे दूर हो जाएँ।"

मास्टरजी ने बताया—"कल्याणजी, आप केवल इसी गाँव के नहीं बल्कि पाँच पंचायतों के सरपंच हैं आपका कार्यक्षेत्र विस्तृत है। आप यदि कमर कस लें तो एक नए समाज का निर्माण कर सकते हैं। आप के ऊपर जो जिम्मेदारी है, उसको आप तभी पूरा कर सकेंगे, जब आप पूरी तरह अनुभव करें कि गाँव के एक-एक व्यक्ति को बदलना है और उन सब को नया प्राणी बनाना है, जो पुराने, अनावश्यक रीति-रीवाजों से चिपके हुए हैं, पक्षपाती हैं और जो दूसरों के हित की सदा कामना करते हैं।"

कल्याणजी ने कहा—"यह तो मैं करूँगा, लेकिन इससे लोगों के रहन-सहन में, उनकी आमदनी में कैसे अन्तर आएगा। बहुत से लोग बेकार हैं। वे शहर की तरफ भागते हैं। इसके लिए क्या करना होगा ?"

मास्टरजी ने कहा—"गाँव के उन सभी लोगों को आप बुलाएँ, जिनके पास फालतू जमीन है, आवश्यकता से अधिक है, उनसे कहा जाए कि वे अपनी कुछ जमीन उन लोगों को दे दें जिनके पास जीविका का कोई सहारा नहीं है। लेकिन इसके लिए आप को सबसे पहले आगे आना होगा। पहले आप जमीन देंगे तभी दूसरों से कहने का आपको अधिकार होगा। इस तरह आप एक बहुत बड़ी समस्या को हल कर लेंगे।"

\+ \+ \+ \+

कल्याणजी सुबह सवेरे मास्टरजी को साथ लेकर गाँव के एक कोने से दूसरे कोने तक घूमते रहे, लोगों से मिलते और उनका हाल-चाल पूछते रहे। कहीं सफाई नहीं थी तो कहीं कचरा पड़ा हुआ था, कहीं से गन्दी नाली बह रही थी तो कहीं पीने के पानी के कुँए के पास बाहर की गन्दगी कुएं में जा रही थी। इन सब बातों को कल्याणजी बड़ी बारीकी से देख रहे थे और लोगों

को समझा रहे थे कि सब मिलकर सफाई का विशेष ध्यान रखें। गाँव के वृद्ध, बालक, जवान, स्त्री-पुरुष सभी को इस बात से आश्चर्य था कि कल्याणजी को आज हो क्या गया है ? कभी वे सीधे मुँह बात भी नहीं करते थे और आज

सबकी कुशल पूछ रहे हैं, सफाई के लिए अधिक जोर दे रहे हैं। बीमारों को अपने खर्चे से शहर के अस्पताल में ले जाने का प्रबन्ध कर रहे हैं। इस परिवर्तन से सभी लोग आपस में तरह-तरह की बातें कर रहे थे। कुछ का विचार था कि अब गाँव की काया पलट हो जाएगी, कुछ लोग शक की निगाह से देख रहे थे। इस प्रकार तरह-तरह की चर्चाओं का बाजार गर्म था।

कल्याणजी मिडिल स्कूल के अहाते में मास्टरजी के साथ खड़े थे और उनसे सलाह ले रहे थे कि स्कूल की इमारत को कहाँ, कैसे ठीक कराना है? प्रधानाध्यापक एक से एक सुझाव दे रहे थे। उसी क्षण कल्याणजी ने स्कूल की मरम्मत व बढ़िया रख-रखाव के लिए पाँच हजार रुपए देने की घोषणा की। लोगों ने खुशी और प्रसन्नता से तालियाँ बजानी शुरू कर दीं। कुछ लोग इसे एक महान् आश्चर्य समझ रहे थे और कल्याणजी में आये परिवर्तन को ईश्वरीय चमत्कार मान रहे थे।

स्कूल से वापस आकर कल्याणजी ने अपने परिवार के भाई, पुत्र तथा अन्य सभी सदस्यों को मास्टरजी के सामने बुलवाया। उन्होंने रुंधे हुए गले से कहा—"अब तक मैं एक ऐसे भ्रम में पड़ा हुआ था, जिससे मुझे उचित और अनुचित का पता ही नहीं चल पाता था, मेरा अहंकार मुझे तुम सबसे अलग किए हुए था। मैंने समय-समय पर तुम सब का दिल दुखाया है, तुम्हें चोट पहुँचाई है और अपने मनमानी फैसले से, अपने आप को तुम सब से दूर कर दिया है। अब मैं तुम्हारे साथ एक सलाहकार की जिम्मेदारी निभाऊँगा, मेरी सलाह यदि तुम सबको पसन्द आए तो कार्य करना, वरना तुम्हारी सब की जो राय होगी, वही मुझे भी स्वीकार होगी।"

कल्याणजी के भाई रामशंकर तथा पुत्र विनोद सहित अन्य सभी लोगों की आँखें भर आईं और एक-एक कर, कल्याणजी के गले मिलते हुए, उन्होंने उनके चरण स्पर्श किए। पुनः एक बार कल्याणजी के परिवार में परस्पर सहयोग और प्रेम के वातावरण की बुनियाद पड़ी, आने वाले भविष्य के लिए अच्छी आशायें बंधी और भय तथा आतंक से मुक्ति मिली।

परिवार के सदस्यों के लिए अब कल्याणजी भय के स्थान पर प्रेम के प्रतीक बन गए। सभी लोग खुल कर उनसे बातें करते, उनके पास आते और उनके प्रेमपूर्ण व्यवहार से उस परिवार में हँसी-खुशी के फूल बिखरने लगे।

\+ \+ \+ \+

कई गाँव के प्रमुख व्यक्तियों, पंचायत सदस्यों और अन्य लोगों की भीड़ कल्याणजी के मकान में इकट्ठी हो रही थी। लोगों के चेहरों पर अलग-अलग भाव प्रकट हो रहे थे। कुछ लोग समझ ही नहीं पा रहे थे कि कल्याणजी को क्या हो गया है। कुछ लोग इस बात से बड़े प्रसन्न दिखाई पड़ते थे कि अब हम सब मिल-बैठकर आपसी मामलों का निर्णय किया करेंगे।

मास्टरजी और कल्याणजी दोनों आकर सभी के साथ बैठ गए। आज कल्याणजी के लिए बैठने की कोई विशेष व्यवस्था नहीं थी बल्कि सभी के साथ वह भी फर्श पर ही बैठे थे। कई ऐसी बातें थीं, जो चर्चा का विषय बनी हुई थीं। गाँवों की सफाई, पीने के पानी की व्यवस्था, दहेज, बाल-विवाह और मृत्यु-भोज को रोकना। एक-एक ग्राम पंचायत के सदस्य अपनी-अपनी राय दे रहे थे, और वे क्या कुछ कर सकते थे इसकी घोषणा भी करते जा रहे थे।

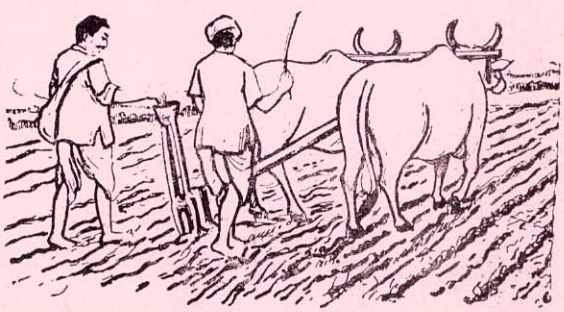

गाँवों की प्रमुख समस्या, जो उभर कर सामने आई, वह थी छुआछूत की समस्या। इसको दूर करने के लिए आपस में यह तय किया गया कि पहले

सदस्यगण खुद छुआछूत की घातक बुराई से अपने आपको दूर रखें, जब वे सभी लोगों के साथ समानता व भाई-चारे का व्यवहार करेंगे तो धीरे-धीरे

जनता पर भी इसका प्रभाव पड़ेगा और वे भी अपने आपको उसी तरह बनाने की कोशिश करेंगे।

पाँच ग्राम सभाओं के सदस्यों ने एकजुट होकर ग्रामवासियों की सहायता के लिए अपनी सेवायें अर्पित की। गाँव के दस परिवारों को जिनके पास जीने का साधन नहीं था और अभाव से जो पूरी तरह घिरे हुए थे, उन्हें कल्याणजी ने अपनी जमीन का एक बहुत बड़ा भाग दिया। इस की घोषणा उनके बड़े भाई रामशंकर ने की। सभी लोगों ने कल्याणजी तथा उनके परिवार के लोगों को धन्यवाद दिया और उनका गुणगान भी किया। कुछ अन्य पंचायत-सदस्यों ने भी जिन के पास आवश्यकता से अधिक जमीन थी अपने असहाय और दीन-दुखी ग्रामवासियों को देने की घोषणा की।

मास्टरजी के जीवन की सब से बड़ी अभिलाषा आज पूरी हुई। उनके इस विचार ने बड़ा क्रान्तिकारी परिवर्तन किया कि जब बड़े लोग, समाज के अगुआ बदलेंगे तभी वास्तव में समाज बदलेगा, क्योंकि शिक्षा की कमी के कारण साधारण लोगों की समझ में ही नहीं आता कि वे क्या करें? उनके सामने केवल एक ही बात रहती है कि भाग्य में जो लिखा है, उसी को भोग रहे हैं। अब तो गाँव की हवा ही बदल गई है। जगपुरा में तो होड़ सी लग गई है कि कौन आगे बढ़ कर सेवा का काम करता है। नवयुवकों की टोलियाँ, गाँव में विशेषकर पीने के पानी के कुँए के पास सफाई ही सफाई नजर आने लगी है। कल्याणजी, मास्टरजी के साथ प्रतिदिन गाँव के एक कोने से दूसरे कोने तक घूमते हैं, लोगों से सीधा सम्पर्क रखते हैं और हर तरह की सहायता जरूरतमन्दों को दिलाने की कोशिश करते हैं। जगपुरा गाँव करवट बदल रहा था, उसका सड़ा गला पुरानापन नए साँचे में ढल रहा था। गाँव के लोग इसका सारा श्रेय कल्याणजी को दे रहे थे और कल्याणजी, मास्टरजी को ही इस बदलाव का श्रेय दे रहे थे। मास्टरजी उन सभी लोगों की सराहना करते थे,

जिनके हृदय में दूसरों के दर्द को दूर करने की चिनगारी मौजूद रहती है, केवल फूँक मारने की जरूरत होती है। निःसन्देह अब कल्याणजी पूरी तरह बदल गए थे। उन्हें अब जीवन का सही अर्थ समझ में आ गया था।

✡✡✡

ग्रामीण साहित्य माला के अन्य पुष्प

1. रधिया लौट आई	कमला रत्नम्
2. आग और पानी	डॉ० प्रभाकर माचवे
3. मेरे खेत में गाय किसने हांकी ?	जोगेन्द्र सक्सैना
4. नई जिन्दगी	डॉ० गणेश खरे
5. बिटिया का गीत	शिव गोविन्द त्रिपाठी
6. समाज का अभिशाप	ब्रह्म प्रकाश गुप्त
7. एक रात की बात	इन्दु जैन
8. जीवन की शिक्षा (लोक कथायें)	नारायण लाल परमार
9. शहर का पत्र गांव के नाम	डॉ० योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'
तथा	
बढ़ते क़दम	विमला लाल